सौ में से एक ★

में से तीन ★

★

★

—मा. दत्तोपंत ठेंगड़ी

मूल्य : ६५ पैसे

यह हमारा कार्य बहुत लम्बा है। "परम वैभवन्नेतु मेतत् स्वराष्ट्रम्" तो बहुत ही दीर्घकाल लेने वाला है। अत्यधिक परिश्रम लेने वाला, ऐसा अपना कार्य है, यह हम लोग जानते हैं। अब जहां इस तरह का ध्येय बहुत दूर का है, वहां पद्धति ऐसी है कि एक दम आखिरी मंजिल जो है इसी का विचार करते हुए ध्यान में रखना है लेकिन पहला कार्य, दूसरा कार्य इस तरह से जो कुल मिलाकर प्रवास होगा-इस प्रवास की कुछ ऐसी किश्तें, इन्सटालमेण्ट, स्टेज तय करके एक एक इन्सटालमैण्ट पूरी करनी है। ऐसा ही जो लम्बा प्रवास करते हैं उनकी यह पद्धति होती है।

किसी ने कहा है कि १००० मील पैदल चलना है। आखिर उसका प्रारम्भ पहले कदम से ही होता है, ऐसा नहीं होता कि पहला ही कदम दो-चार मील का ले लिया। पहला कदम ३०-३५ का होगा। धीरे धीरे आगे बढ़ेगा। जो हिमालय के शिखर पर चढ़ते हैं वो पहले ही सोचेंगे कि २९,००० हजार फीट ऊंचा जाना है तो देखते देखते ही चक्कर आ जायेगा इसलिए २९,००० हजार फीट जाना है यह मन में लक्ष्य रखते हैं लेकिन पहला चरण ३० फीट उपर जायेंगे, बेस बनाऐगें फिर कैम्प करेंगे फिर ३०-३५ फुट ऊपर जायेंगे कैम्प करेंगे। ऐसे धीरे धीरे उपर जाते हैं।

हमारे यहाँ ऐसा कहा गया है, शनैः पन्था शनैः कन्था शनैः पर्वत मस्त में शनैः विद्या शनैः वित्तं पंचे तानि शनैः शनैः यह सब शनैः शनैः होता है।

पन्था मार्ग कन्था कम्बल पर्वत मस्तक पर, शिखर पर क्रमशः जाना पडता है विद्या भी क्रमशः प्राप्त करनी पडती है इस प्रकार विशाल ध्येय को भी क्रमशः प्राप्त किया जाता है।

शायद इस दृष्टि से हो या कुछ तात्कालिक परिस्थिति के परिणाम स्वरुप हो हम जानते हैं कि १९३९ में प. पूजनीय डाक्टर जी ने एक आदेश सब लोगों को दिया था कि भाई शीघ्रातिशीघ्र ग्रामीण क्षत्र में सब सौ हिन्दुओं में से एक हिन्दु और शहरी क्षेत्र में सौ हिन्दुओं में तीन हिन्दु इतने स्वयं सेवक हमको बनाने हैं, ऐसा कहा जैसे मैंने कहा कि यह जो फेसड प्रोग्राम वाली बात है उसके पिछे भाव हो सकता है तात्कालिक परिस्थिति याने महायुद्ध चल रहा था इंगलैण्ड महायुद्ध में था, इंगलैण्ड की कठिनाई में यह हिन्दुस्तान की अपोरच्युनिटी है यहभी एक विचार था क़्या इसका लाभ उठाया जा सकता है यह भी सामयिक विचार मन में उठता था। दोनों बातों का विचार हो सकता है परिणाम स्वरुप ऐसा ही आदेश परम पूजनीय डाक्टर जी का आया था १९३९ में कि ग्राम में १% एवं शहरी क्षेत्र में ३% होना इतनी संख्या होनी चाहिये ।

उस समय मैं, मेरे साथी हम कालेज में पढ़ते थे, हमको तो लगा कि यह जो लक्ष्य दिया है बडा छोटा है मोडैस्ट है । कोई खास कठिन बात इसमें नहीं। १९४१ में हमारा जो पुराना मध्य-प्रदेश था जिसमें ८ मराठी जिले थे, १४ हिन्दी जिले थे। महाकौ-शल के तो उस समय पुराने मध्यप्रदेश का ईस्टर्न पूर्वी केम्प जबलपुर में हुआ था उस समय परम पूजनीय डाक्टरजी की मृत्यु हो चुकी थी। परम पूजनीय गुरुजी ने सरसंघ चालकत्व का दायित्व ग्रहण किया था और रिपोर्टिंग वगैरा जो हुआ तो विदर्भ के सर कारी ८ जिले संघ के जिले १० तो एक संघ के जिले के कार्यवाह ने ऐसा रिपोर्ट किया कि जो लक्ष्य दिया है १% वह हमारे जिले में हमने तो पूरा कर लिया हैं तो सब को बडी प्रसन्नता हुई चलो एक जिले में लक्ष्यपूरा हुआ। बाद में समारोह का जब भाषण गुरुजी का हुआ तो अन्य बातों के साथ इसका भी जिक्र करते हुए

उन्होंने कहा कि ऐसा कहा गया है कि एक जिले में हमारा यह लक्ष्य पूरा हुआ है हुआ होगा तो यह आनन्द की बात है। लेकिन डाक्टर जी ने कहा उनको समझें क्या ? डाक्टरजी के कहने का मतलब यह नहीं था कि १०० में १% और १०० में ३% कोई भी एक लूला लंगडा, बहरा व अन्धा निकाल लिया जाय। कोई अच्छा कार्य करना याद नहीं है गोड फोर नथींग फेलौ,ऐसा कोई १००में से एक आदमी खडा कर दो तो प्रतिशत पूरा हो गया ऐसा था क्या? तो ऐसा नहीं उन्होंने ऐसा अवश्य कहा १०० में से १,१०० में से३, सौ में से ऐसा स्वयं सेवक खडा करना है जो बाकी सम्पूर्ण ९९ वे लोगों का सम्पूर्ण विश्वास प्राप्त कर सकता है, बाकी ९७ वे लोगों का पूर्ण विश्वास प्राप्त कर सकता है जिसके विषय में सबके मन में यह धारणा हो यह अच्छा आदमी है नेक आदमी है यह ठीक सलाह देगा कोई भी समस्या निर्माण हुई हम इसके पास गये तो इसका मार्गदर्शन ठीक रहेगा, यह निस्वार्थ है और दृष्टि से सम्पूर्ण गाँव पर प्रेम करने वाला है। यह जो बात कहेगा वह गांव की भलाई की ही बात रहेगी उसका इसमें कोई निजी स्वार्थ नहीं रहेगा, ऐसा पूर्ण विश्वास जिसके बारे में बाकी बचे सब हिन्दुओं में हैं इस तरह एक व तीन आदमी स्वयं सेवक के नाते खड़े करना। दूसरे अर्थ में एक और तीन आदमी जो खडे करने हैं वो शेष हिन्दु समाज का नेतृत्व करने को योग्यता रखने वाले यह एक और तीन, ऐसा उन्होंने कहा यह अर्थ हम लोगों को समझना हैं।

हम लोग तो समझते थे कि ऐसा कोई एक आदमी खडा कर देंगे काम पूरा हो जायेगा अब उसके पीछे नया अर्थ आ गया कि कितनी योग्यता रखने वाला चाहिये कि बचे हुए शेष हिन्दु समाज का नेतृत्व करने की योग्यता रखते हैं और बाकी का समाज जिन पर पूरा भरोसा रखता हैं ऐसा एक आदमी गांव में

शहर में ३ आदमी निकर में खडे करने हैं। अब इसके कारण हम स्वयं सेवकों में, उस समय हम कालेज में थे बडी चर्चा हुई कि यह बहुत कठिन कार्य हैं लेकिन मैं और मेरे एक दो साथी थे जो अगले साल प्रचारक के नाते एकट्ठा ही निकले हम उस समय नागपुर में थे तो हम को लगता था कि यह लोगों को कठिन क्यों लगता हैं। गुरुजी ने इतना ही कहा कि जो नेता बन सकते हैं, नेतृत्व कर सकते हैं ऐसे लोग खडे करो। तो हमने कहा कि यह तो सरल धन्धा है नेता बनना कुछ वैसी बात थोडे ही है क्योंकि ऐसा था कि जब हम छोटे बच्चे थे तो कांग्रेस का आन्दोलन चलता हम बानर सेना में थे, बानर सेना याने कांग्रेस की आज कल जैसी हर पार्टी की यूथ संस्था रहती है उन दिनों कांग्रेस में बालक लोगों की सेना होती थी तो हम लाग बानर सेना में काम किये हुए थे। हमारे प्रदेश के विभिन्न राजनीति के श्रेष्ठ महापुरुष उनको नजदीक से देखा हुआ था वे सब नेता लोग थे। नेता बनने के लिए क्या क्या करना पडता है वो तरकीब हमने नजदीक से देखी थी। हां, खुद हमने उसका ट्रायल नहीं किया था क्योंकि हम छोटे थे। ता हमें इतना आत्मविश्वास था कि नेता बनो तो हम बन सकते हैं बाकी कोई बने न बने हम नेता बन सकते हैं क्योंकि हम ने उसका अध्ययन किया है इतने नेताओं का नजदीक से दर्शन लिया है इसमें कठिनाई तो खास नहीं है तो मेरा और हमारे एक साथी का हौंसला बढ गया कि हम गुरुजी के बताये हुए मार्ग पर अग्रसर हो सकते हैं नेता ही बनना है बड़ी अच्छी तरह से अब चूंकि हम वानर सेना में छोटे थे हमारी पास वो काम आता था वो अटेण्ड करने का काम नेताओं की आदतें कैसी होती है व्यवहार कैसा होता है सब जानते थे और वह तरकीब भी ऐसी थी हम भी कर सकते थे अब उदाहरण के लिए हमारे एक नेता थे। उनको केसरी कहा जाता था जो नेता होता था उसको कुछ टाइ-

टल्स होती थी प्रायः प्राणियों की टाइटल्स रहती है। कोई केशरी रहता है कोई शार्दुल रहता है तो हमारे एक नेता प्रदेश केशरी थे। भाषण देते थे भाषण अखबार में जाय इसकी तो व्यवस्था होती थी लेकिन मुश्किल तो यह थी कि कोई जोश रहता ही नहीं था भाषण भी रोता हुआ और शकल भी रोती हुई थी लेकिन जब तक भाषण में तालियां नहीं बजती तब तक उसको अच्छा भाषण नहीं कहा जा सकता, तो फिर पार्टी के सामने समस्या थी कि तालियाँ कैसे बजे तो आखिर में हम को एक आदेश मिला कि तुम लोग जरा स्टेजिक पोज़िशन में कुछइधर कुछउधर बैठो। श्रोताओं में काई इधर कोई उधर बैठो और जब मैं ऐसा हाथ करुंगा तो यह इशारा समझना कि तालियां बजाना। तो हम छोटे ही बच्चे थे हमने सोचा ठीक है तो जैसे नेताजी ऐसे करते हम तालियां बजाते थे। जब हम तालियां बजाते और लोग भी तालियां बजाते थे अब एक समय यह हुआ कहाँ बजाना कब बजाना हम लोग ऐसा नहीं समझते थे बस ऐसा याद कर लिया था कि ऐसा हाथ करने पर ताली बजाना। अभी हमारा केशरी यह हमारा नेताजी एक बार भाषण दे रहे थे कि काटने वाली मक्खी उनके नाक के पास आयी इसलिए उनके हाथ का हटाना हुआ कि हमने तालियां बजा दी सबको समझ आ गया कि कुछ तो गडबड हैं। बाद में वह रहस्य खुल गया यह सारा प्लैण्ड था। दूसरे हमारे शार्दुल थे। वह केशरीजी से भी बढ़कर थे उनकी स्टाइल ऐसी थी कि नागपुर से बम्बई निकलते थे तो मैं, नेता हूं इसकी एडवरटाइजमेन्ट कैसी हो तो हर स्टेशन पर स्वागत होना चाहिए इसलिए उन्होंने हर गांव में अपने दो एक एजेन्ट रखे थे उनका काम कोई ज़्यादा नहीं होता था जब नेताजी नागपुर से बम्बई जायेंगे तो पहले उनका टेलीग्राम चला जाता कि स्टेशन पर आ जाये वो स्टेशन पर आ जाते और ज़िन्दाबाद और जय जय कार शुरु कर देते और फिर

वहां ५०-६० लोग इकट्ठा हो ही जाते यह देखने के लिए कि क्या हैं क्या नहीं। फिर एक एक के हाथ में माला पकडा देते फिर पहनवा देंगे तो ५०-६० मालाएं हर स्टेशन पर गले में पड जाती पर उसके पीछे भी एक तरकीब थी। हर स्टेशन पर कोई माला का खर्चा नहीं करना पडता था हमारे नेताजी फर्स्ट क्लास के कमरे में बैठते थे और उनके प्राइवेट सैक्रेटरी पास के थर्ड क्लास के डिब्बे में बैठते थे नेताजी के कमरे में खाली टोकरा रहता था और प्राइवेट सैक्रेटरी के टोकरे में ५०-६० पुष्प मालाएं भरी रहती थी। अगले स्टेशन यह नेताजी अपनी मालाएं खाली टोकरे में रखकर उतर कर प्राइवेट सैक्रेटरी को सौंप देते और प्राइवेट सैक्रेटरी मालाओं को एक एक के हाथ में दे देता था यानी एक बार ही खर्चा हुआ पर हर स्टेशन पर स्वागत हुआ यह सारी प्रक्रिया हम बचपन से जानते थे तो हमने सोचा कि परम पूजनीय गुरुजी ने जो यह आदेश दिया है उसके कारण हमारे अधिकारी परेशान हो रहे हैं कि नेतृत्व करने वाले लोग कैसे निर्माण हो सकते हैं, हम परेशान नहीं होंगे क्यों कि हम जानते थे कि नेता होता है वह सामान्य जन के अनुसार व्यवहार नहीं करते थोडा सीनातान कर चलना चाहिये, तीरछी टोपी लगानी चाहिये, रास्ते में जाते हुए किसी ने प्रणाम किया तो पूरा प्रणाम नहीं लेना चाहिये। पूरा प्रणाम लेने वाला उसके बराबर के हो जाते हैं। तो यदि वो प्रणाम पूरा करते हुए यह दिखाना कि तुम्हारा प्रणाम मैंने स्वीकार कर तुम्हारे पर कितना उपकार किया हैं मैंने।

तो हम सब इस बात में जुट गये कि इन सब बातों की नकल करेंगे और आइने के सामने हमने यह अभ्यास शुरु कर दिया। बाद में प्रचारक भी हो गये किन्तु दो महिने हुए थे ओ० टी० सी० के दो माह पूर्व गये थें। संघ शिक्षा वर्ग पहले दूसरे

प्रदेश में गये थे। मैं केरला में गया था वहाँ से दो वृद्धों को ओ० टी० सी० देखने लाये थे संघ शिक्षा वर्ग का समारोप हो गया इन दोनों को पहली मंजील पर टिकाया था नीचे उनका बिस्तर लाकर तांगे में डालना था तो मैंने उसको बुलाया कि भाई इधर आओ तुम एक बिस्तर उठाओ मैं एक बिस्तर उठाता हूं, तो मैं आता हूं कह कर वह आया नहीं। वह आया नहीं तो मैंने दोनों बिस्तर उठाये और नीचे तांगे में रख दिये उनको स्टेशन पर पहुंचा दिया। बाद में वो साथी हमसे मिले बोले भाई देखो मुझसे नाराज हो गये होंगे। मैंने कहा क्या बोले। मैंने कहा कि मैं आ रहा हूँ और मैं नहीं आया, मैंने बोला तुमको कोई काम आ गया होगा इसलिए नहीं आये इसमें नाराज होने की क्या बात है। वह बोले तो ठीक है तुम नाराज नहीं हुए पर मैं नाराज हो गया, मैंने कहा कि भाई कारण क्या हो गया। तुम्हारी कोई प्रतिष्ठा है कि नहीं तुम प्रचारक हो, नेता हो, यह तुम्हारे दो स्वयं सेवक वो तुम्हारे अनुयायी हैं, फोलोवर्स है और तुम अपनी डिगनीटि नहीं रखते हो तुमने उनके बिस्तर अपने कन्धे पर उठा लिए क्या तुम्हारी डिगनीटि रही, तुम्हें कौन अपना अधिकारी मानेगा। हमने कहा कि भाई वे बूढ़े लोग थे कहां बिस्तर उठाते। उन्होंने कहाकि बूढें होंगे पर आफ्टर आल हमारे फोलोअरस है हमें डायरेक्ट ही देना है आदेश ही देना है। हमने कहा भाई गलती हो गई। बात वहीं रुक गई। तीसरे दिन ऐसी घटना हुई कि प० पू० श्री गुरुजी के यहां हम दोनों थे, किसी शादी विवाह के कारण माताजी दूसरी तरफ मण्डप में चले गये थे और श्री गुरुजो थे और हम दोनों ही थे। इतने में दिल्ली के संघचालक मा० प्रकाशचन्द्रजी भार्गव आये तो गुरुजी ऊपर से नीचे उनको रिसीव करने आये, उनके साथ चार-पांच लोग और थे। उनको लेकर ऊपर जाने लगे, रास्ते में हमको कहा कि भार्गव जी को तुरन्त जाना है, तुम दोनों ८ कप चाय बनाकर जल्दी

ऊपर ले आओ। वोतो चले गये, हम असमंजस में पड गये, जीवन में कभी चूल्हा जलाया ही नहीं, चाय कैसे बनती है. चाय कैसे पडती है, चीनी कितनी पडती है, कुछ पता ही नहीं। वो ऊपर चले गये, हम चूल्हे के साथ झगडा करने लगे, हमने जो किया उससे अग्नि तो निर्माण हुई, धुंआ ही धुंआ कमरे में भर गया तो इधर हम शरम के मारे यह कर रहे थे कि इतने में श्रीगुरुजी ठहाके से हंस-कर अन्दर आये और बोले, मैं यह जानता था कि तुमसे जमने वाला नहीं। देखो, कैसे किया जाता है और बैठ गये, जैसे हम जमीन पर बैठते हैं और बोले, देखो, पहली लकडी ऐसे रखते हैं फिर ऐसे रखते हैं हवा आनी चाहिए फिर केरोसीन डालो, फिर ऐसा जलाना चाहिये, देखो अग्नि फिर कैसे जलती है। फिर दूसरे को पूछा ८ कप के लिए चाय–चीनी कितनी लगती है, हम क्या बोले, हमको कुछ आता ही नहीं था, आठ चम्मच चाय, १६ चम्मच चीनी वो सब डालकर और कहा कि पानी जब उबल जाये, चाय बन जाय तो फिर ऊपर ले आना, वो चले गये, चाय क्या बनी कैसी बनी, यह तो हमको किसी ने बताया नहीं पर रात को वो प्रचारक और मैं इकट्ठा बैठे तो बोले कि आज हमारे आश्चर्य को धक्का लगा कि मैंने कहा कि क्या हुआ, बोले हमारे सर्वोच्च, सरसंघचालकजी ने नीचे आकर चूल्हा जलाया, हमारे सामने इनकी प्रतिष्ठा क्या रही ? हमने कहा कि भाई तुम ऐसा करो, तुम गुरुजी को समझो कि संघचालक का व्यवहार कैसा होना चाहिये ?

वह घटना तो हो गई पर हम दोनों के मन में विचार चक्र चला कि बात क्या है ? हम जो हमारे नेता बनने का स्वप्न देख रहे थे, उल्टा ही मामला दिख रहा है। यह चक्कर क्या है, हम लोगों ने विचार करना शुरु किया और जैसे विचार करना शुरु

किया वैसे ही दिखाई दिया कि गुरुजी ने जो कहा था १०० में से तीन, जो नेतृत्व रखने की क्षमता रखते हों तो उनके नेतृत्व की कल्पना अलग थी, ऐसा कुछ हमको लगा। फिर हम देखने लगे कि कौन नेता कैसा है, उनका व्यवहार कैसा है, उनका मोटीवशान कैसा है, सब देखने लगे, सारा अध्ययन करने के पश्चात् लगा कि सारे नेता एक श्रेणी के नहीं, अलग अलग तरह के नेता हैं।

खासकर ऐसा दिखाई दिया कि दो तरह के नेता होते हैं- एक तो व्यक्तिवादी, अहंवादी, मैं नेता हूं, मेरा नेतृत्व होना चाहिए, मेरा नाम होना चाहिये यानी मेरे लिए सब कुछ, संस्था भी है तो संस्था का उपयोग मेरी प्रतिष्ठा के लिए कैसे हो सकता है, भाषण भी देता हूं तो पूछता हूं कि भाषण कैसा हुआ, कैसा प्रभाव हुआ, इसके कारण मेरा ग्रुप बढेगा क्या ? तरह तरह के प्रश्न हमारे मन में आ जाते हैं तो यह एक व्यक्तिवादी अहंवादी नेतृत्व है जिसका जीवन-मूल्य है, पद-प्रतिष्ठा और दूसरा दिखाई दिया तो हमने राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ में देखा कि आदर्शवादी नेतृत्व जहां व्यक्ति का विचार नहीं, मेरी पोजीशन क्या है, यह विचार नहीं, कितने ही यहां प्रचारक हो गये, सैंकडों हो गये जिन्होंने सारा जीवन सघ कार्य में लगाया, कोई नहीं जानता, कोई नाम नहीं जानता, इससे एक शतांश कार्य कहीं बाहर के क्षेत्र में किया होता तो फोटो वगैरा भी अखबार में आ जाते। यहां सारा जीवन लगा दिया कहीं फोटो नहीं, कहीं नाम नहीं, कुछ पागलपन की धुन-तो यह दूसरे टाईप का नेतृत्व है। ऐसा कुछ लगा कि जो पद प्रतिष्ठा के लिए नहीं, व्यक्ति के लिए नहीं, अहं के लिए नहों तो आदर्श में व्यक्ति विलीन हो गया हैं, स्वयं अपने को भूल गया, अब दुनियां में ऐसा दिखता है कि दोनों तरह के उदाहरण कि व्यक्तिकी सामाजिक योग्यता किस बात पर अवलम्बित है। दोनों तरह के विचार।

एक विचार नेपोलियन ने जब वह आदर्शवाद से हट गया तो अच्छे ढंग से प्रकट किया. जो पद प्रतिष्ठा वाले व्यक्तिवादी नेतृत्व का विचार था कि दुनियां में "मैन आर लाइक फिगर्स" वे अपने अपने पद के अनुरूप कीमत रखते हैं। सभी व्यक्ति अंकों के समान हैं, आंकडों के समान है, वे किस पोजीशन में हैं, उस पर उनकी कीमत लगती है और नेपोलियन ने उदाहरण दिया ११११, हर एक की कीमत समान है, अन्तरगत मूल्य समान पर स्थान के अनुसार कीमत बढ़ जाती है। १, १०, १००, १००० हो जाती है, अतःपोज़ीशन के कारण योग्यता बढ जाती है। व्यक्तिवादी,अहंवादी नेतृत्व का जीवन मूल्य बडे अच्छे शब्दों में उन्होंने प्रकट किया।

अब हमारी संस्कृति में ज़ीवन मूल्य अलग प्रकार का है, यह बताया गया है कि पद प्रतिष्ठा के कारण व्यक्ति की कीमत नहीं होती वह तो अन्तरगत होती है, मूलतः होती है, आन्तरिक होती है। एक कौआ है जो राजप्रसाद के शिखर पर बैठा है और दूसरा गरुड है, जमीन पर बैठा है तो क्या राजप्रसाद पर कौए के बैठने से गरुड से कीमत अधिक हो गई, नहीं होती है। वास्तविक योग्यता जो होती है वह अन्तरगत योग्यता होती है, आत्मिक योग्यता होती है, केवल स्थान, पद, पोजीशन के कारण योग्यता का मूल्यांकन नहीं करना चाहिये, यह बात हमारे यहां कही गई है। लेकिन सन १९४७ के पश्चात हमारे देश के सार्वजनिक वायुमण्डल में जीवन मूल्य ही बदल गये, १९४७ के पहले जीवन मूल्य अलग थे, हम सब लोग स्वातंत्र्य संग्राम में जुटे हुए थे और उस समय यह ठीक है कि करोडों लोग तो हिस्सा नहीं ले सकते थे किसी भी संघर्ष में, लेकिन जीवन मूल्य यह बन गया था कि सरकार की नौकरी भी करते थे, मन में यह समझते थे कि सरकार की नौकरी यह ठीक नहीं, आत्म ग्लानि महसूस करते

थे, यह ठीक नहीं। देश के लिए जो कष्ट उठायेंगे, आत्म क्लेष उठायेंगे, जेल में जायेंगे,मोटा कपडा पहिनेंगे, किसी ने चीनी खाना छोड दिया था, जब तक देश स्वतन्त्र नहीं होगा तब तक नहीं खाऊंगा, इस प्रकार जो आत्म क्लेष बर्दाश्त करेंगे वे ऊंचे लोग हैं, श्रेष्ठ लोग हैं ऐसा माना जाता था। माने योग्यता का निष्कर्ष था, वह आत्म निरपेक्ष देश के लिये कष्ट करना यह योग्यता का निष्कर्ष था। अब १९४७ के बाद यदि ऐसा होता कि जैसे स्वराज्य प्राप्त हुआ खण्डित भारत का ही क्यों न हो जैसे ही स्वराज्य प्राप्त हुआ वैसे ही हमारे नेताओं ने सभी को दिशा देकर काम में जुटाया होता कि स्वराज्य प्राप्त हुआ है हमारी जुम्मेदारी का अन्त नहीं, प्रारम्भ है न कि "ऐण्ड आफ दी बिगीनिंग" न कि 'बिगिनिंग आफ दी ऐण्ड" इस दृष्टि से स्वराज्य को एक रिवार्ड न समझ कर रैसपांसीबिलीटी समझना है,नई जुम्मेदारी हमारे ऊपर आई है,यह कोई पारितोषिक नहीं, जुम्मेदारी है - यह भावना लेकर स्वयं जुट जाते, लोगों को जुटाते, यह नई दिशा जन-मानस को मिल जाती। जीवन मूल्य वहीं कायम रहते जो १९४७ के पहले थे, पर ऐसा नहीं हुआ।

स्वराज्य जो मिला उसे पारितोषिक माना गया,जुम्मेवारी नहीं माना गया। राष्ट्र के पुनर्निमाण के कार्य में सबको नहीं जुटाया गया तो नेताओं से लेकर अनुयायियों तक यही समझने लगे कि जो करना था वो कर लिया,कष्ट उठाये हैं, अब जो भी आयेगा उसमें से ज्यादा से ज्यादा मैं अपने लिए कैसे समेट सकता हूं, यही देखना, बाकी अब बचता है, बाकी काम करना, क्या करना आउट आफ डैट हो गया, ऐसा लोग समझने लग गये। १९४७ के पहले लोग मानते थे कि कर्म फल का त्याग करना चाहिये। १९४७के पश्चात् यह हुआ कि कितने फल के त्याग से कितना होगा,

हिसाब करते हुये त्याग करो, कर्म फल का त्याग नहीं अपितु त्याग का कितना मूल्य होगा, हंगर स्ट्राइक करने के कारण कहां की सीट प्राप्त होगी, कारपोरेशन, एम० एल० ए०, एम० पी० की कितने दिन जेल में जाने के कारण मिनिस्टर बनने की सम्भावना बढ़ सकती है। सारा बराबर हिसाब किताब करते हुये फिर कैलकुलेटेड सैकरीफाइस, इस तरह हिसाब किताब किया हुआ त्याग करना एक ऐसा नया जीवन मूल्य अपने यहां शुरू हुआ, आदर्शवाद समाप्त होता जा रहा है, हर एक अपने स्वार्थ के पीछे भाग रहा है, ऐसा दृश्य दिखाई दे रहा है। भगवान ने मनुष्य का ऐसा एक मन निर्धारित किया है कि आज भी मन में दो बातें साथ साथ नहीं चल सकती है। व्यक्तिवाद एवं आदर्शवाद-दोनों साथ साथ नहीं चल सकते। जिस मन में व्यक्तिवाद होगा वहां आदर्शवाद नहीं होगा और जहां आदर्शवाद होगा वहां व्यक्तिवाद नहीं रह सकता। जैसे जहां अंधेरा होगा वहाँ प्रकाश नहीं होगा और जहां प्रकाश है वहां अंधेरा रह नहीं सकता, वैसे ही जहां आदर्शवाद है वहां व्यक्तिवाद रह ही नहीं सकता, जहां व्यक्तिवाद है वहाँ आदर्शवाद रह ही नहीं सकता।

जीसस ने एक जगह ऐसा कहा है कि जिस हृदय के सिंहासन पर शैतान बैठा है उस सिंहासन पर भगवान बैठेंगे नहीं यानि भगवान शैतान के साथ एक ही सिंहासन शेयर नहीं करेंगे। अपने यहां किसी सन्त कवि ने ऐसा कहा है कि "मैं था तब हरि नहीं, जब हरि तो मैं नहीं, प्रेम गली अति साँकरी, जामें दो न समाई"। जब "मैं" यह भावना थी तब हरि के दर्शन नहीं हुये और जब हरि के दर्शन हुये तो मैं स्वयंभू को भूल गया हूं तो प्रेम की गली इतनी संकडी है कि ऐसे अवसर पर दो नहीं समा सकते।

हम व्यक्तिवादी या आदर्शवादी किस नेतृत्व को मान्यता देते हैं, यह प्रश्न है कि हम किस प्रकारके नेतृत्व का निर्माण करना चाहते हैं। अब हम कहते हैं कि हमारा यह ईश्वरीय कार्य है, प्रार्थना में भी हम यह कहते हैं कि "त्वदीयाय कार्याय बद्धा कटीयं" जो ईश्वरीय कार्य होगा, वह ईश्वरीय कार्य जिसके साधन मात्र कार्यकर्ता होंगे, उनका मन यदि अपवित्र होगा, स्वार्थी होगा, अहं होगा, स्व केन्द्रित होगा तो ईश्वरीय कार्य के माध्यम बन सकते हैं क्याँ ? जैसे ध्येय पवित्र है वैसे साधन भी पवित्र होना चाहिये। साध्य और साधन दोनों पवित्र होने चाहिये। यदि हमारा ईश्वरीय कार्य है तो साधन के रूप में, माध्यम के रूप में हम लोग हैं तो हमारी प्राइरीटी, हमारी गुणवन्ता क्या होनी चाहिये यह एक विचार करने का प्रश्न है। हम यदि अहंवादी या व्यक्तिवादी होते हैं तो क्या चार लोगों को इकट्ठा कर सकते हैं, क्या प्रेरणा दे सकेंगे। जैसे अंग्रेज ने कहा है "रोर बिगिन लव" "प्रेम से प्रेम" निर्माण होता है, अहं से अहं पैदा होता है। मेरे मन में यदि यह विचार रहा कि चालाकी से तिकडम करके आप सबका शोषण करते हुए आप सबको यूटि-लाइज कर मैं अपनी लीडरी जमाँऊगा, यह हो सकता है। आज नहीं, कल, परसों आपके मन में आ सकता है कि हम लोगों का शोषण कर यह लीडरी कर रहा है। क्यों न हम इसका एक्सप्लायटेशन करें, हम भी लीडर क्यों न बनें। फालोवर का कोई नाम नहीं। हमारे देश में एक ऐसी पार्टी रही है जिसमें सब लीडर ही लीडर थे, कोई फालोवर नहीं थे। ऐसा कहा गया कि— सर्वे यत्र प्रणैतर सर्वे पंडित मानिनाः सर्व महत्वमिच्छन्ति राष्ट्र कं तद् विनश्यति।

ऐसा अपने यहां कहा गया है तो इस तरह से जैसा मैंने कहा कि जहाँ कि सब नेता ही नेता, हर एक आदमी व्यक्तिगत

रूप से बड़ा विद्वान, शक्तिशाली है लेकिन सब मिलकर जो ग्रुप बनता है वह बहुत कमजोर है "इन्डिज्यूवल ईज स्ट्रांग बट कलक्टिव वीक" व्यक्तिगत हरेक व्यक्ति बड़ा स्ट्रोंग है पर समूह कमजोर हो जाता है। डच सेना की ऐसी बात बताते हैं कि उस जमाने में सेना में भरती होने के लिए बड़े बडैं अधिकारियों के, जागीरदारों के, ऐसे लडके आते थे जो बडैं बाप के बड़े बेटे होते थे और उसके कारण हरेक अपने साथ अपना नौकर भी लेकर आता था। आते थे मिलिट्री ट्रेनिंग के लिये लेकिन अपने नौकर वगैरा लेकर आते थे फिर नौकर ने ही रसोई बनाना, बूट साफ करना, यहां तक गणवेश भी नौकर ही पहिना कर उनको बाहर भेजते और और ऐसे नौकरों ने मिलकर गणवेश पहनाये हुये हैं ऐसे परेड ग्राउण्ड पर आते थे। हरेक हर दूसरे की तरफ देखते थे कि अरे यह ज़ागीरदार का लडका होगा मैं आफीसर का लडका हूं, दूसरा सोचता यह आफीसर का लडका है, मैं भी तो इण्डस्ट्रीयलिस्ट का लडका हूं, ऐसा किसने कोई आर्डर सुनने की स्थिति में नहीं। हरेक यही सोचता मैं किसी से कम नहीं। इसके कारण उस सेना की हालत कैसी होगी, कोई किसी की सुनता नहीं था तो सभी आर्डर ही देने वाले थे, कोई किसी का पालन करने वाला नहीं, ऐसा इस डच सेना के समान इनका व्यवहार था, ऐसे नेताओं की यह पार्टी आज इस पार्टी का नाम नहीं रहा तो क्या इससे संगठन हो सकता है। नेताज़ी हो सकते हैं किन्तु संगठन नहीं, अहंकार से चार लोग भी साथ चल नहीं सकते।

हमारा तो ईश्वरीय कार्य है, ऐसा हम कहते हैं। यह ईश्वरीय उत्ताद बात छोड दीज़िये, हमारे एक रिश्तेदार फिल्म क्षेत्र में कार्य करते थे, अच्छे एक्टर थे अच्छे डाइरैक्टर भी थे। इन्होंने एक फिल्म की रचना की और उसमें कुछ ख्यातिप्राप्त

कलाकारों का सहयोग लिया । इन सबके सहयोग से बनी इस फिल्म की राष्ट्रीय स्तर पर खूब प्रशंसा हुई । डाइरेक्शन इनका था । ख्याति सुनकर इनके मन में भाव आया कि इसमें श्रेय अन्य कलाकारों को भी गया, यह मनको अच्छा नहीं लगने के कारण दूसरी फिल्म बनाई जिसमें किसी से सहयोग नहीं लिया । डाइरेक्शन उत्तम था किन्तु हुआ क्या–जैसे "आपरेशन सक्सेसफुल बट पेशेण्ट डेड" अहं भाव के कारण अच्छे कलाकारों का सहयोग नहीं लिया, पिक्चर फैल हो गई । पिक्चर बढिया बनी थी, किन्तु मन में यह भाव था कि मेरी ही छवि ऊपर आनी चाहिये, अन्य कलाकारों का नाम नहीं आना चाहिये, इसलिये जितने लोगों का सहयोग लेना चाहिये, लिया नहीं, उसका परिणाम यह हुआ कि पिक्चर फैल्योर हो गई ।

जहां अहंवाद के कारण, जहां कमर्शियल बात है वहां भी संगठन ठीक ढंग से हो नहीं सकता । हमारा तो ईश्वरीय कार्य है तो यह कार्य क्या अहंवादी नेतृत्व के आधार पर चलेगा ? यह विचार करने की बात है । ईश्वरीय कार्य के लिए तो साधन भी पवित्र चाहिए, अहंवादी नेतृत्व यह कार्य कैसे कर सकता है । इस दृष्टि से हम देखते हैं कि दोनों तरह के नेता दुनियां में दिखाई देते हैं, व्यक्तिवादी नेताओं के उदाहरण तो अनगणित हैं, पिछले पांच सात साल में जिन्होंने अखबार पढ़े हैं उन्हें तो नाम गिनाने की आवश्यकता नहीं, जितने नाम चाहें अखबारों में से नाम निकाल सकते हैं-जो अहंवाद और व्यक्तिवादी नेतृत्व करने वाले लोग थे ।

आदर्शवादी नेतृत्व करने वाले के मन में अहं का विचार बिल्कुल नहीं रहता, चाहे हमारे देश के लोग हों, चाहे विदेश के लोग हों । अहं का विचार उनके मन में बिल्कुल नहीं रहता । उदा

हरण के लिए:- एक समय अमेरिकन स्वातन्त्र्य संग्राम में ऐसा आया था कि वे जीतने वाले थे और उसी समय जो वहां के पोलीटीशियन थे उनके मन में वहां के चीफ कमाण्डर ज़ार्ज वाशिंगटन उनके विषय में ईर्ष्या का भाव जागृत हुआ। वो आपस में बात करने लगे अरे इसको हमने कमाण्डर इन चीफ अपाइण्ट किया और आज इसी के नाम की चर्चा हो रही है। इसकी सेना विजय प्राप्त करती जा रही है। हम लोगों की चर्चा कहीं नहीं होती तो जरा इसका टांग खींचनी चाहिये, नहीं तो यह हमारे उपर चला जायेगा। अब टांग खींचने का रास्ता क्या था ? यह तो बिचारा लडाई के मैदान में था। यह जो चीजें चाहता था जैसे सिपाहियों के लिए कपड़े, अनाज, बूट, जो भी सामान चाहता था, उपलब्ध होते हुए भी, भेजने में देरी कर देते थे। इससे क्या हुआ, इसकी बदनामी होगी सिपाही इससे नाराज होंगे, जनता में बदनाम हो जावेगा, विजय प्राप्त होने में देरी होगी, इसकी लोकप्रियता घटेगी, ऐसा सोचकर उन्होंने सबोटेज किया लेकिन जनता के भी यह बात ध्यान में आई, नाराज होकर सिपाहियों के नेता यानि इसके असिस्टेण्ट डैपूटेशन लेकर जार्ज के पास आये और कहा कि अब तो लडाई समाप्त होने वाली है, विजय हमारे हाथ आनेवाली है लेकिन इसके पश्चात ये जो गद्दार लोग हैं इनके हाथ में सत्ता मत दीजिये क्योंकि इनके सामने ध्येय यह प्रमुख बात नहीं हैं। इनको लोकप्रियता की ही ज्यादा फिक्र है, इनके हाथ में देश जायेगा तो बर्बाद करेंगे। आज देश में हमारी जो सेना है जिसके आप कमाण्डर इन चीफ हैं, आपके अलावा कोई शक्ति केन्द्र नहीं है, सीधे आप देश की हकूमत अपने हाथ में लीजिये, आपका कोई विरोध करने की क्षमता नहीं रखता। अब इतनी जब अनुकूलता थी तब यदि जार्ज जो अहंवादी, व्यक्तिवादी होते तो कहते, ठीक है, मैं सत्ता हाथ में लेता हूं पर यह विचार उनके मन में नहीं था।

आदर्शवादी नेता थे उसके कारण उन्होंने कहा कि नहीं मैं हाथ में सत्ता नहीं लूंगा। विजय प्राप्त होगई,उसके पश्चात् विधान बनाने की समिति बनाई। विधान के अन्तर्गत चुनाव हुए, यह बात ठीक है कि उस चुनाव में भी प्रथम राष्ट्रपति के नाते उनको ही चुन लिया पर सीधे सत्ता हाथ में लेने की गुंजाइश थी। इतना मोह वो नहीं कर सके। कोई भी व्यक्तिवादी अहंवादी नेता ऐसा नहीं टालसकता।

ऐसा उदाहरण ईटली में भी आता है। ईटली को जागृत करने का सारा कार्य जोसेफ मैजेनी ने किया,उसको इटली का राष्ट्र-पति ऐसे कहा जाता है लेकिन जिस समय लडाई का मौका आया तो उसने अपने सब अनुयाइयों को इकट्ठा लाया और बताया कि देखो अभी तक जागरण और संगठन का कार्य था जिसमें मैं माहिर हूं अब लडाई का काम है,मैं यह युद्ध-शास्त्र नहीं जानता,ऐसे ही नेतृत्व के अन्दर कार्य करना चाहिये जो युद्ध शास्त्र जानता हो और अपने साथ जोसेफ गैरीबाल्डी है। वास्तव में उसको ज्यादा लोग नहीं जानते थे जोसेफ गैरीबाल्डी जो वह अच्छा युद्ध नेता है, हम सब इसे अपना नेता माने एवं इसके अण्डर में हम कार्य करें और जिसको राष्ट्रपिता कहा गया वह जोसेफ मैजेनी जिसने जागरण किया था, पूरा संगठन किया था वह भी आज युद्ध की आवश्यकता है यह समझकर उसी ने गैरीबाल्डी को नेता बनाया और स्वयं जोसेफ मैजेनी गणवेश पहन कर हाथ में राइफल लेकर गैरीबाल्डी की कमान के नीचे सिपाही के रूप में खड़े हो गये, इस कारण बाकी लोग भी खडे हो गये।

सन् १९८० के हिन्दुस्तान में आज क्या यह हो सकता है, विचार कीजिये ? आज जो मूल्य नेतागिरी के चल रहे हैं उसमें ऐसा हो सकता है क्या ? लेकिन गैरीबाल्ड़ी ने भी कमाल किया

उसने लडाईयाँ की, राजसत्ताओं को हटा दिया, सम्पूर्ण इटली को स्वतन्त्र किया और इटली को स्वतन्त्र करने के पश्चात विक्टर एमुअल को राजा बनाया। जैसा पहले सोचा गया था उनका राज्याभिषेक हुआ और राज्याभिषेक होने के पश्चात उन्होंने सीधा कहा अब मेरा काम हो गया,यह आपकी तलवार लीजिये, मैं अपनी खेती पर जा रहा हूं (केकरी आइलैन्ड पर गांव था) अब मैं काम करने जा रहा हूं। लोगों ने कहा साहब आपने इतना कार्य किया है, आपने ही तो देश को आजाद कराया, आप मन्त्री बन जाइये, कम से कम कमाण्डर बन जाइये, उन्होंने कहा यह धन्धा मेरा नहीं मुझे लिमिटेड कार्य दिया गया था जितना मुझे करना था, मैंने किया है अब फिर से अपनी खेती करूंगा, उन्होंने बताया कि इस समय देश का मैं मन्त्री नहीं बनना चाहता क्यों कि अब तक काम लडाई का था, वह युद्ध का कार्य मैं जानता था, अब इसके बाद कूटनीति का काम है और कूटनीति का काम मैं नहीं जानता। आपका जो प्राइममिनिस्टर है कैबूर, यह कार्य अच्छी प्रकार से कर सकता है और उन्होंने सारा दायित्व कैबूर को सौंप दिया। परन्तु भारत में वर्तमान में (१९८०) में चल रहे "किस्सा कुर्सी का" में यह सम्भव हो सकता हैं क्या ? आज तो नेता केवल "मैं-मैं" करने वाले ही रह गये।

प० पू० श्री गुरुजी ने लिखा "मैं नहीं, तू ही" यह जो भावना उनकी थी जो यह वृत्ति थी,यह जो भावना थी कि "मैं नहीं तू ही तू" मेरे साथ ध्येय है, मैं नहीं, यह आदर्शवादी जीवन मूल्य का उत्कृष्ट आविष्कार है। उत्कृष्ट आविष्कार को लेकर चलने वाले वे ही कुछ बडा कार्य कर सकते हैं, संगठन खडा कर सकते हैं, यह आदर्शवाद जिनके पास नहीं, वह कोई बडा कार्य कर ही नहीं सकते।

हमारे यहां कितने उदाहरण हैं। श्रीकृष्ण वास्तव में पाण्डवों के मार्गदर्शक,गाइड एवं फिलोसाफर भगवान श्रीकृष्ण थे। यदि नहीं होते तो समय समय पर पाण्डव इतनी दूर तक नहीं पहुँच सकते थे और श्रीकृष्ण ने यह सोचा होता कि सारे साम्राज्य का मैं अधिपति बनूंगा तो उनको रोकने की ताकत किसी के अन्दर नहीं थी लेकिन उन्होंने अपने लिये साम्राज्य का विचार नहीं किया उन्होंने सारी ताकत पाडवों के लिए खर्च की,सारी देश में एक छत्र साम्राज्य खडा करने चक्रवर्ती साम्राज्य स्थापित होना चाहिये, देश मजबूत होगा, यह समझ कर और पाण्डव उनको जहां अपना नेता मानते थे वहां राजसूय यज्ञ आरम्भ हुआ तो अग्रपूजा का अधिकार किसे देना चाहिये तो कई लोगों के विरोध करने के बावजूद अग्रपूजा का मान श्रीकृष्ण को ही मिलेगा जिसको जितना अधिकार मिलना चाहिये, राजसूय यज्ञ करने वाले भी जिसे अपना नेता मानते थे।

राजसूय यज्ञ में इतना बडा आयोजन है किसने कौनसा विभाग सम्भालना है, सभी ने अपना अपना कार्य ले लिया जब भगवान श्रीकृष्ण को पूछा गया तो कहा जब सब लोगों का भोजन हो जायेगा तो सबकी झूंठी पत्तलें उठाने का कार्य अपने जुम्मे लेता हूं याने जिसको अग्रपूजा का मान है, चक्रवर्ती बनने वाले पाण्डव जिसको नेता मानते हैं वह राजसूय यज्ञ में कहता है कि मैं वह डिपार्टमेण्ट लूंगा जो भोजन होने के पश्चात् झूंठी पत्तलें उठाने का काम मैं करूंगा। किस तरह का यह नेतृत्व होगा। नेतृत्व स्थाई स्वस्थ नेतृत्व कैसे निर्माण होता है इसके बारे में हमारे विष्णुसह स्त्रनाम में बहुत सुन्दर वर्णन किया है–अमानी मान दो मान्यो लोकस्वामी त्रिलोक धृत। लोक स्वामी जन नेता यानी प्रक्रिया क्या ? जो स्वयं अपने लिए सम्मान की अपेक्षा नहीं करता और

दूसरों को सदैव सम्मानित करने अपने लिए सम्मान की अपेक्षा नहीं करना जिसके कारण वह स्वयं मान्य हो जाता है। सर्वमान्य हो जाता है। फिर लोक स्वामी इसके जन नेतृत्व जिसके पास आता है, ऐसा जो त्रिलोक धृक् जिसकी धारणा करने वाला भगवान–विष्णु,। यह स्वस्थ एवं स्थाई नेतृत्व की प्रक्रिया प्रोसीजर इसमें आती है। यह हमें ध्यान में रखनी चाहिये। राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के लिए जो अभिप्रेत है, सन् १९७९ यह १९८० के हिन्दुस्तान में यह जो स्वस्थ प्रणाली है, स्वस्थ नेतृत्व है, यह अभिप्रेत है और हमारा अच्छा जो स्वयंसेवक अहंकार करते हुये नेता नहीं बन सकता,स्वयंसेवक अपने को कार्य-कर्ता समझकर सबकी सेवा करता है वह सेवा करने वाला है, उसके कहने पर बडे बडे लोग कार्यरत हो जाते हैं। जैसे प्रचारक की योग्यता स्वयंसेवक से कभी कम भी होती है पर जब आत्म विस्मृत होकर प्रचारक स्वयं अपने को भूल-कर आदर्श में विलीन हो जाता है उससे कहीं अधिक बौद्धिक योग्यता रखने वाले लोग भी उसके कहने पर काम में जुट जाते हैं। जैसे कहा गया है=आपन बन दास की नाई, सब ही नचावे राम गुसांई। स्वयं तो दास के समान बन गये हैं सबे नचावे राम गुसाई =राम गुसाँई एकसा है, स्वयं तो सेवक बन गया है पर सारी दुनियां को नचाता है। ऐसी योग्यता उस छोटे कार्यकर्ता में भी आ जाती है जो ध्येय में विलीन हो जाता है जो आदर्श में विलीन हो जाता है। आज चकाचौंध वायुमण्डल के कारण गडबड होने की कोई आवश्यकता नहीं, यह जो सब दिखने वाली बातें हैं, अखबार वाली बातें हैं जिस प्रकार का हम स्वयंसेवक का विकास एवं निर्माण कर रहे हैं वही राष्ट्र को स्वस्थ दिशा की ओर ले जायेगा। दूसरी कोई बात राष्ट्र का विकास नहीं कर सकती, यह विश्वास मन में रखने की आवश्यकता है। यदि हम ईश्वर को गुरू मानते हैं तो अपनी यह पृथ्वी को एक वैज्ञानिक ने कहा है कि

पृथ्वी को जल नाम देना चाहिये था क्यों कि जहां पानी ही ज्यादा है और यह जो पानी है तरह तरह की ऊंचाई से निर्माण होता है और यहां से बहने वाला पानी इसकी तुलना में अरावली के किसी शिखर से निकलने वाला पानी या जल-प्रवाह होगा, उसकी पोजीशन ऊंची होगी या नहीं, हिमालय से निकलने वाला जल प्रवाह कहेगा कि यह अरावली से निकलने वाला प्रवाह कोई प्रवाह हैं, यह मेरे से छोटा है, लोवर पोजीशन में है और अरावली से निकलने वाला जल-प्रवाह यहां से निकलने वाले जल-प्रवाह से कहेगा कि यह मेरे से छोटा है मेरी ऊंची पोजीशन है, मैं ऊंचे स्तर का हूं। इस प्रकार का गर्व जितने ऊंचे स्थान का जल प्रवाह होगा वह कर सकता है। लेकिन भगवान का नियम एवं नैसर्गिक नियम क्या हैं, देखिये, भगवान की माया ही ऐसी है कि जितने भी जल-प्रवाह संसार से निकलते हैं, चाहे हिमालय से निकले आल्पस से निकले, किसी बड़े पर्वत से निकले, किसी भी ऊंचाई से निकले, ईश्वर का ऐसा नियम हैं कि उनको धीरे धीरे नीचे आना पडता है और अन्त में सभी जल-प्रवाह शरण किसकी लेते हैं, उस महासागर की शरण में जाते हैं जो महासागर सब से नीचा है। नीचे स्तर का माप दण्ड जिसको माना गया है इस नाते महासागर से ऊंचाई नापी जाती है। फलाना स्थान सी लेवल से कितना ऊंचा है, समुद्र के स्तर से ५००० फीट २००० फीट ऊंचा है, समुद्र के स्तर से ५००० फुट, २००० फीट ऊंचा नेतृत्व की जो सबसे छोटी कसौटी है, नीचत्व को जो सबसे बडा माप दण्ड का क्राइटेरिया है उस महासागरकी गोदी में, शरण में आखिर आते हैं। ऊंचे से ऊंचे जल प्रवाह। सम्पूर्ण पृथ्वी में बडी बडी ऊंचाई से निकले जल-प्रवाह उसकी शरण में आते हैं। "आपूर्यमाण अचल प्रतिष्ठं समुद्रमाप प्रविषन्तु यद्वत।" ऐसा नहीं होता कि सम्पूर्ण जल-प्रवाह के आने से सागर में उन्मत्तता आ गई हो, फूल गया हो। उसने एशिया को

इधर धकेल दिया है,अफ्रिका को उधर धकेल दिया है तो आपूर्यमाणं तरह तरह के जल–प्रवाह आते हैं तो अचल प्रतिष्ठें तो अपनी प्रतिष्ठा, डिग्नीटी, सोबरनीटि,गम्भीरता कायम रखता है क्यों कि सब का समावेश अति विशाल हृदय का है अति गम्भीर हृदय का है। जल—प्रवाह आगया है, इस कारण निरा अहकार की कोई सम्भावना नहीं। इस प्रकार का नेतृत्व राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ निर्माण करना चाहता है। नेताजी निर्माण करना नहीं चाहता, कार्यकर्ता इस तरह का निर्माण करना चाहता है यह सारी बातें यदि हम ख्याल में रखें तो बाद में हमें ऐसा पता चलेगा कि हम लोग जो बडा सरल कार्य समझते थे कि प० पू० गुरुजी ने कहा है कि १ प्र० श और ३ प्र० श० को नेताजी खडा करना है, हम लोग समझते हैं कि यह आसान और सस्ता कार्य है पर यह आसान और सस्ता कार्य नहीं है बहुत कठिन कार्य है इसमें बहुत मेहनत करनी पडती है। स्वयं आत्म निरीक्षण करते हुये स्वयं को ठीक बनाते बनाते बडी मुश्किल हो जाती है। जिन लोगों को अपने उदाहरण से अच्छा बनाना तो कितनी मेहनत करनी पडेगी। यह कोई सरल कार्य नहीं, ऐसा हमें कई वर्ष कार्य करने के पश्चात् हम लोगों के ध्यान में आई।